जीव
निराकार या साकार

लेखक

वीरेन्द्र गुप्तः

स्वाधीन राष्ट्रीय सम्वत् ६१
सृष्टयाब्द १,९७,३८,१३,१०९
मानव सृष्टि वेद काल १,९६,०८,५३,१०९
दयानन्दाब्द १८५
विक्रम सम्वत् २०६५
सन् २००८ ई०

प्रकाशक :—

वेद संस्थान

मण्डी चौक, मुरादाबाद

प्राप्ति स्थान :—

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार
प्रकाशन मन्दिर
मण्डी चौक, मुरादाबाद
चलितवार्ता ९८९७५२८९५०

आवास :—

वेद कुटि '९३'
राम बिहार कालोनी
जिला सहकारी बैंक के पीछे,
मुरादाबाद

प्रथम संस्करण :—

तीन हजार

मूल्य :—

सत्य को ग्रहण करना और असत्य को छोड़ना

कम्प्यूटर :— यूनिक प्रिन्टर्स

लेखक परिचय

नाम — श्री वीरेन्द्र गुप्तः
जन्म — श्रावण शुक्ल ६, संवत् १९८४, बुद्धवार ३ अगस्त, १९२७ ई०, मुरादाबाद
गृहस्वामिनी — श्रीमती राजेश्वरी देवी
सम्प्रति — व्यवसाय

सम्मान :

१— १४ सितम्बर १९८२ राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार समिति।
२— ३ अक्टूबर १९८२ आर्यसमाज मण्डी बाँस, मुरादाबाद।
३— १४ सितम्बर १९८८ श्री यशपाल सिंह स्मृति साहित्य शोधपीठ, मुरादाबाद।
४— ३० सितम्बर १९८८ अहिवरण सम्मान पुरालेखन केन्द्र, मुरादाबाद।
५— २ जनवरी १९९२ साहू शिवशक्ति शरण कोठीवाल स्मारक समिति, मुरादाबाद। द्वारा साहित्य सम्मान
६— ७ जनवरी १९९६ अभिनन्दन समिति द्वारा नागरिक अभिनन्दन एवं अभिनन्दन ग्रन्थ तथा सामूहिक अभिनन्दन पत्र।
७— ६ मार्च १९९९ अखिल भारतीय माथुर वैश्य महासभा द्वारा राष्ट्रीय अधिवेशन ग्वालियर में (साहित्य) समाज शिरोमणी सम्मान।
८— ९ मई १९९९ विराट आर्य सम्मेलन पश्चिमी उत्तर प्रदेश मेरठ (आर्य शिरोमणी) सम्मान।
९— २६ जनवरी २००० माथुर वैश्य मण्डल, मुरादाबाद द्वारा (साहित्यक शताब्दी पुरुष) सम्मान।
१०— २५ फरवरी २००० (अमृत महोत्सव) के अवसर पर संस्कार भारती, मुरादाबाद द्वारा अभिनन्दन।
११— १५ सितम्बर २००० (राष्ट्रीय हिन्दी सेवा सहस्त्राब्दी सम्मान) सहस्त्राब्दी विश्व हिन्दी सम्मेलन नई देहली के द्वारा। सँयुक्त राष्ट्र संघ (यूनैस्को) आदि से सम्बद्ध।
१२— १७ सितम्बर २००० ''ज्ञान मन्दिर पुस्तकालय, रामपुर'' हिन्दी दिवस पर सम्मान।
१३— १४ सितम्बर २००३ हिन्दी साहित्य सदन द्वारा 'हिन्दी साहित्य सम्मान'।
१४— २६ जनवरी २००७ माथुर वैश्य मण्डल मुरादाबाद द्वारा 'युग पुरुष' सम्मान।

उल्लेख :

१— हिन्दी साहित्य का इतिहास ले० डा० आलोक रस्तौगी एवं श्री शरण, देहली १९८८।
२— "आर्य समाज के प्रखरव्यक्तित्व" दिव्य पब्लिकेशन केसरगंज अजमेर १९८९।
३— "आर्य लेखक कोष" दयानन्द अध्ययन संस्थान जयपुर १९९१।
४— एशिया—पैसिफिक "हू इज़ हू" (खण्ड ३) देहली २०००।
५— गंगा ज्ञान सागर भाग ४ पृष्ठ २३ सन् २००२।

प्रकाशित कृतियाँ :

१— इच्छानुसार सन्तान, २— लौकिट (उपन्यास), ३— पुत्र प्राप्ति का साधन, ४— पाणिग्रहण संस्कार विधि, ५— How to be get a son,(अनुवादित) ६— सीमित परिवार, ७— बोध रात्रि, ८— धार्मिक चर्चा, ९— कर्म चर्चा, १०— सस्ती पूजा, ११— वेद में क्या है? १२— गर्भावस्था की उपासना, १३— वेद की चार शक्तियाँ, १४— कामनाओं की पूर्ति कैसे, १५— नींव के पत्थर, १६— यज्ञों का महत्व, १७— ज्ञान दीप, १८— The light of learning (अनुवादित) १९— दैनिक पंच महायज्ञ, २०— दिव्य दर्शन, २१— दस नियम, २२— पतन क्यों होता है, २३— विवेक कब जागता है, २४— ज्ञान कर्म उपासना, २५— वेद दर्शन, २६— वेदांग परिचय, २७— संस्कार, २८— निरकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन, २९— मनुर्भव, ३०— अदीनास्याम, ३१— गायत्री साधन, ३२— नव सम्वत्, ३३— आनुषक (कहानियाँ), ३४— विवेकशील बच्चे, ३५— जन्म दिवस, ३६— करवा चौथ, ३७— योग परिणति, ३८— पर्वमाला, ३९— दाम्पत्यदिवस, ४०— छलकपट और वास्तविकता, ४१— श्रद्धा सुमन, ४२— माथुर वैश्यों का उद्गम, ४३— ईश महिमा, ४४— मन की अपार शक्ति, ४५— नयन भास्कर, ४६— युधिष्ठिर यक्ष गीता, ४७— वेद उद्गीत, ४८— दर्पण, ४९—राष्ट्रीय गौरव, ५०— वातायन, ५१— जीव निराकार या साकार

बोधक

मेरा सौभाग्य

मैं प्रश्न करता को बड़ा शुभचिन्तक मानता हूँ। प्रश्न के समाधान हेतु नई से नई विचार धारा पर मनन करने का पूर्ण अवसर मिल जाता है पिछले स्वाध्याय की आवृति हो जाती है, और इस आवृति से ही नई दिशा मिलने लगती है। यह मेरा परम सौभाग्य है कि मिलक निवासी श्री राम चन्द्र जी ने यह प्रश्न "जीव निराकार या साकार" श्री स्वामी विवेकानन्द जी से करके उनके उत्तर को मेरे सामने रखा। मैंने उस पर विचार किया और समाधान रूप में यह लघु पुस्तिका "जीव निराकार या साकार" के नाम से प्रस्तुत करने का अवसर मिला। इसमें सभी प्रमाण पुरातन हैं जिनको सभी ने देखा है, पढ़ा है। परन्तु प्रश्न की दृष्टि से नहीं समझा।

मैं यह कह सकता हूँ कि लाखों करोड़ों में से एक अथवा दो व्यक्ति मिल सकेंगे जो जीव को साकार मानते हों, नहीं तो सभी उसे निराकार ही समझते हैं। मैंने निराकार और साकार के सभी पहलू प्रस्तुत किये हैं, आप इन सभी पर विचार करके देखें कि सत्य क्या है।

"जीव अति सूक्ष्म होने के कारण धर्माचार्यों और वैज्ञानिकों की पकड़ में नहीं आ पाता। इसी कारण जीव को निराकार की कोटि में समझा जाने लगा, परन्तु वह निराकार नहीं कुछ न कुछ आकारवान तो अवश्य है, इस प्रकार वह साकार की कोटि में आ जाता है।"

आर्य्याभिविनय उत्तरार्ध के मन्त्र २ तथा मन्त्र ४४ में स्पष्ट ऋषिवर ने कहा है "जिसका आदि कारण माता, पिता, उत्पादक कोई नहीं, किन्तु वही सबका आदि कारण है।" "जीव अविद्या आदि दोष युक्त है और ब्रह्म अविद्यादि दोषयुक्त नहीं है।"

॥ ओ३म् ॥

वन्दना

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यापिहितं मुखम् ॥

यजुर्वेद ४०/१७

स्वर्ण के पात्र से सत्य का मुख ढँका हुआ है।

प्रश्न और चर्चा

श्री राम चन्द्र जी मिलंक निवासी ने स्वामी विवेकानन्द जी से प्रश्न किया कि 'जीव निराकार है या साकार' उस पर श्री स्वामी विवेकानन्द जी ने उत्तर दिया कि जीव निराकार है, कारण बताया जो चेतन होता है वह निराकार ही होता है।

मैंने इस प्रश्न को लेकर कई से चर्चा की, सबने एक ही समान सा उत्तर दिया कि 'जीव' निराकार सा ही हो सकता है। परन्तु श्री अर्जुन वीर जी ने उल्टा मुझसे ही प्रश्न किया कि इस प्रश्न पर स्वामी जी महाराज ने क्या समाधान किया है। मैंने कहा— इस प्रश्न का समाधान किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। हो सकता है उनके सामने यह प्रश्न ही न आया हों और कहा कि यह प्रश्न बहुत ही सटीक है, वंजनदार है, इसका समाधान आप ही कीजिये।

निराकार साकार तुलनात्मक

सबसे पहले यह जानना आवश्यक है कि निराकार और साकार का क्या अन्तर है? इस पर आप ध्यान दीजिये। निराकार उसे कहते हैं जिसका कोई आकार न हो, जिसका कोई आकार नहीं हो तो वह दीखता नहीं, न दीखने से भी उसे निराकार कहते हैं। साकार उसे कहते हैं जिसका कोई आकार होता है, जिसका कोई आकार होता है तो वह दीखता है, दीखने के कारण उसे साकार कहते हैं। निराकार

में व्यापकता और सर्वज्ञता विद्यमान रहती है। साकार में सीमितपन और अल्पज्ञता विद्यमान रहती है। जो निराकार है वह सब जगह व्यापक है और संसार उसमें व्याप्य है। जो साकार है वह एक देशीय है वह न सबमें व्यापक है और न सब उसमें व्याप्य है। जो व्यापक है वह अल्पज्ञ नहीं हो सकता और जो अल्पज्ञ है वह कभी व्यापक नहीं हो सकता। जो निराकार है वह कभी साकार नहीं हो सकता, और जो साकार है वह कभी निराकार नहीं हो सकता। जो निराकार है वह जन्म—मरण के बन्धन से दूर रहता है और वह बाहर, भीतर, आगे, पीछे, दायें, बायें सब ओर देख सकता है। परन्तु जो साकार है वह और तो क्या अपनी पीठ पीछे हो रहे चक्र—कुचक्र को न देख सकता है और न जान सकता है।

परमात्मा निराकार अर्थात् अदृश्यमान होते हुए भी विद्यमान है और कभी साकार रूप में उपस्थित नहीं हो सकता। परन्तु अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण जीव निराकार भास्ता है, भासित निराकार जीव और निराकार परमेश्वर का साक्षात्कार हो सकता है, परन्तु निराकार का साकार रूप शरीर में स्थित पंच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा साक्षात्कार कभी नहीं हो सकता। उसे तो केवल निराकार भासित जीवात्मा जिसमें निराकार परमेश्वर का अंश विद्यमान है उसी से इस साकार शरीर में योगाभ्यास द्वारा मिलन कर सकता है। कारण जीवात्मा बिना शरीर के कुछ कर नहीं सकता और परमेश्वर बिना शरीर के ही सब कुछ करता है।

तुलना

१— निराकार परमेश्वर जिसका कोई आकार नहीं। क्या जीव का भी कोई आकार नहीं? किन्तु प्रमाणों से ऐसा दीखता है कि जीव कुछ न कुछ आकारवान अवश्य है।
२— निराकार में व्यापकता और सर्वज्ञता विद्यमान रहती है।

क्या यह गुण जीव में हैं? जीव में न व्यापकता है न सर्वज्ञता। उसमें तो सीमितपन और अल्पज्ञता विद्यमान रहती है। ३— निराकार सब जगह व्यापक है और सब संसार उसमें व्याप्य है। जीव में यह गुण नहीं, न वह व्यापक है और न सब उसमें व्याप्य हैं। ४— जो व्यापक है वह ज्ञानी होता है, अल्पज्ञ नहीं हो सकता। जीव अल्पज्ञ है व्यापक नहीं। ५— जो निराकार है वह कभी साकार नहीं हो सकता न जन्म—मरण के बन्धन में होता है। जीव साकार है, वह जन्म—मरण के बन्धन में होता है। ६— निराकार बाहर, भीतर, आगे, पीछे, दायें, बायें सब ओर देख सकता है, परन्तु जीव सब ओर क्या अपनी पीठ पीछे हो रहे चक्र—कुचक्र को भी नहीं देख सकता। इस प्रकार जीव निराकार नहीं साकार ही बनता है।

जीव की सूक्ष्मता

कई योगाचार्यों ने जीव की सूक्ष्मता पर प्रकाश डालते हुए कहा—मानवी बाल की नोक के ६० लाखवें भाग के अनुमान का अति सूक्ष्म जीवात्मा का रूप माना है।

यह सत्य सिद्ध है कि आत्मा का भार और आकार निश्चित और सबका एक समान हैं

अणोरणीयान्महतो महीयान्।

कठोपनिषद् २/२०

जीवात्मा सूक्ष्म से भी अधिक सूक्ष्म है। आत्मा में प्रभु का अंशाभिभाव सदैव विद्यमान रहता है।

कठोपनिषद् के आचार्य ने भी आत्मा को निराकार नहीं आकार—वान माना है।

निराकार ईश्वर के गुण

दूसरा नियम—ईश्वर सच्चिदानन्द—स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, सृष्टिकर्त्ता।

ईश्वर! एक शक्ति का पुञ्ज है, उसमें समस्त ऐश्वर्यों का भण्डार है। वह एक सुप्रीम पावर है और समस्त शक्तियों का चालक है।

जीव! में इनमें से कोई गुण विद्यमान नहीं। यह समस्त गुण किसी देह धारी में क्या हो सकते हैं?

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।
तयोरन्या: पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।

ऋग्वेद १/१६४/२० अथर्ववेद ९/९/२०

जीव, परमात्मा और जगत का कारण ये तीनों पदार्थ अनादि और नित्य हैं। जीव और ईश क्रम से अल्प—अनन्त, चेतन विज्ञानवान, सदा विलक्षण, व्याप्यव्यापक भाव से संयुक्त और मित्र के समान वर्तमान हैं, वैसे ही जिस अव्यक्त परमाणु रूप कारण से कार्यरूप जगत होता है। वह भी अनादि और नित्य है, समस्त जीव पाप पुण्यात्मकं कार्यों को करके उनके फलों को भोगते हैं, और ईश्वर एक सब ओर से व्याप्त होता हुआ न्याय से पाप—पुण्य के फल को देने से न्यायाधीश के समान देखता है।

इसी मन्त्र की श्री स्वामी वेदमुनि परिब्राजक व्याख्या करते हैं—दो सुन्दर पंखों वाले पक्षी जीवात्मा और परमात्मा, ज्ञान और कर्मरूपी उभय डैने (पंख समूह) है जिसके अपने समान ही अनादि कालीन प्रकृति रूपी वृक्ष पर आसीन हैं। उनमें से एक (जीवात्मा) प्रकृति के फलों को स्वाद ले लेकर खा रहा है और दूसरा (परमात्मा) उसको देख रहा है।

जीवात्मा प्रकृति के शरीर में शरीर का अधिष्ठाता बनकर शरीर के द्वारा प्रकृति के पदार्थों को भोगता है, किन्तु वह परमात्मा प्रकृति के पदार्थों में और स्वयं जीवात्मा ने जो शरीर धारण कर रखा है उसमें भी व्यापक होने के कारण उसके भोगने के प्रकारों को देखता है।

जीवात्मा शरीर के द्वारा प्रकृति के पदार्थों को भोगता है, यह गुण साकार के ही हैं, निराकार के नहीं।

आत्मा का स्वरूप

जीव, आत्मा, जीवात्मा यह तीनों नाम एक ही हैं। जीवात्मा 'सत्' शाश्वत् सदैव से रहने वाली 'चित्' चेतन स्वरूप है। जो सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म है, वह इतनी सूक्ष्म है कि वैज्ञानिक भी उसे पकड़ नहीं पाये परन्तु वह आकारवान अवश्य है।

'ज्ञान, प्रयत्न, कर्मफल भोग' और विस्मृति इसके स्वाभाविक गुण हैं और 'शुद्ध, बुद्ध, मुक्त' के स्वभाव से युक्त हैं।

सूक्ष्म और स्थूल

जीवात्मा अति सूक्ष्म है, और भार रहित है, परमात्मा सूक्ष्म तर है, वह जीवात्मा के अन्दर विद्यमान है और इतना महान है कि उसमें समस्त ब्रह्माण्ड समाया हुआ है।

साक्षात्कार

प्रत्येक साधक यही प्रश्न करता है, क्या मुझे प्रभु के दर्शन हो सकते हैं और कितना समय लग सकता है? मेरा यह कहना है कि प्रभु दर्शन बाद की चीज है पहले अपना आत्म दर्शन तो करो जो अणु से भी सूक्ष्म है। जब उसका

पूर्ण परिचय प्राप्त हो जाता है तो उसे प्रभु साक्षात्कार स्वतः ही हो जाता है।

शरीर, वाणी, बुद्धि, मन, यह सब जड़ हैं। आत्मा के होने से यह सब कार्य करते हैं, और उसके जाते ही यह कुछ नहीं कर सकते। जीवात्मा! जिसका अपना निजं अस्तित्व है वह एक पदार्थ है, वस्तु है जो अति सूक्ष्म है परन्तु साकार अवश्य है।

सत् दशक पूर्व अमरीका के पत्र 'शिकागो रिकार्ड हेरल्ड' ने यह समाचार छापा तो चारो ओर तहलका मच गया। आत्मा का भी निश्चित वचन होता है, यह तथ्य मैसेचूसैंट्स के पाँच वैज्ञानिक चिकित्सकों के लगातार छः सालों के परीक्षणों के बाद प्रकाश में आया था। परीक्षण वोस्टन के एक सैनिटोरियम में किये गये थे।

मृत्यु से कुछ घण्टे पूर्व एक विशेष प्रकार की बनाई गई तुला के एक पलड़े पर बने बिस्तर पर लिटा दिया गया। पाँच डाक्टरों की उपस्थिति में रोगी ने दम तोड़ दिया और दूसरा पल़ड़ा नीचे को झुक गया। इस परीक्षण के बीच प्राण पखेरू उड़ जाने के पश्चात् देह के भार में आधे औंस से लेकर एक औंस तक का ह्रास हो जाता है। स्त्री, पुरुष दोनों पर यह प्रयोग किये गये।

परन्तु यंह सत्य नहीं, अत्यन्त भ्रामक है। इस प्रकार आत्मा का भार सही नहीं हो सकता। उपरोक्त परीक्षण में केवल मनुष्य के शरीर की ही परीक्षा की गई है। यदि हम इसी प्रकार हाथी के शरीर की परीक्षा करें तो आप देखेंगे उसमें एक औंस नहीं चार–पाँच औंस तक का भार कम हो जायेगा। आत्मा तो चींटी में भी है जिसके शरीर का भार आधा औंस से भी कम है। जब चींटी का प्राण पखेरू उड़ते हैं तो उसके शेष शरीर के भार का अन्तर कितना होगा, इसका स्वयं अनुमान लगा लें।

पुराणों के अनुसार चौरासी लाख योनियों में भ्रमण

करता हुआ आत्मा सर्वश्रेष्ठ कर्म योनि मनुष्य शरीर में आता है। इससे यह तो स्पष्ट ही है कि संसार में जितने भी जीव जन्तु, कीट पतंग, जलचर, नभचर, भूचर आदि, सभी में आत्मा विद्यमान है, इसे आज का तर्क सम्मत विज्ञान भी स्वीकार करता है और यह भी स्पष्ट है कि आत्मा कर्मानुसार अनेक योनियों में भोग भोगता हुआ मनुष्य शरीर में आता है। अर्थात् सभी जीव–जन्तु आदि का आत्मा एक समान है। परन्तु पूर्वोक्त प्रयोगात्मक परीक्षण की कसौटी पर भिन्न–भिन्न प्रकार के शरीरों के अन्तर से आत्मा का भार भिन्न–भिन्न प्रकार का होगा। जितना बड़ा शरीर होगा मृत्यु के पश्चात् उसका उतना ही अधिक भार कम होगा। जितना छोटा शरीर होगा मृत्यु के पश्चात् उतना ही भार कम घटेगा।

प्रश्न उठता है, तो फिर यह क्या है? उत्तर सीधा साधा है कि वह 'आत्मा' नहीं 'प्राण वायु' है। स्पष्ट है, आत्मा नहीं प्राण वायु ही निकलती है। आत्मा तो धनञ्जय प्राण के साथ ही निकलती है।

वेद भाष्यकार मन्त्र दृष्टा महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज समस्त प्रकार के प्रश्नों को सुलझाकर समाधान करने वाले अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में लिखते हैं।

"तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः,
आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यः पृथ्वी,
पृथिव्या औषधयः औषधिभ्योऽन्नम् अन्नाद्रेतः रेतसः पुरुषः।
स वा एव पुरुषोऽन्नरसमयः।।

यह तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्दव अनु०१ का वचन है– उस परमेश्वर और प्रकृति से आकाश अवकाश अर्थात् जो कारण रूप द्रव्य सर्वत्र फैल रहा था उसको इकट्ठा करने से अवकाश उत्पन्न सा होता है, वास्तव में आकाश की उत्पत्ति नहीं होती क्योंकि बिना आकाश के प्रकृति और परमाणु कहाँ ठहर सकें? आकाश के पश्चात् वायु, वायु के

पश्चात् अग्नि, अग्नि के पश्चात् जल, जल के पश्चात् पृथ्वी, पृथ्वी से औषधि, औषधियों से अन्न, अन्न से वीर्य, वीर्य से पुरुष अर्थात् शरीर उत्पन्न होता है। यहाँ तैत्तिरीय आकाशादि क्रम से ओर छान्दोग्य में अग्नि आदि। ऐतरेए में जलादि क्रम से सृष्टि हुई। वेदों में कहीं प्रसव, कहीं हिरण्यगर्भ आदि से, मीमांसा में कर्म, वैशेषिक में काल, न्याय में परमाणु, योग में पुरुषार्थ, सांख्य में प्रकृति और वेदान्त में ब्रह्म से सृष्टि की उत्पत्ति मानी है।''

इस प्रकार भी जीव की निराकार्ता सिद्ध नहीं होती।

सात मर्यादायें

उस प्रभु ने मानव को कई क्षेत्र में उतारने से पूर्व सात मर्यादायों से बाँधकर रखा है। १—नेत्र, २—कान, ३—वाणी—रूप मुख, ४—स्वाद—रूप रसना, ५—नासिका, ६—पग, ७—उपस्थ। इनके द्वारा संसार के समस्त शुभाशुभ कार्य करता है।

सप्त मर्यादा कवयस्ततस्क्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरोगात्।
आयोर्ह स्करभं उपमस्य नीके पथां विसर्गेधरुणषु तस्थौ।।

ऋग्वेद १०/५/६

''सात मर्यादायें बनायी हैं क्रान्तदर्शी शक्तियों वाले परमात्मा ने उनमें से एक का भी उल्लंघन करता है, वह पापी हो जाता है। मनुष्य मात्र का वह आश्रयदाता, पास ही के घोंसले अर्थात् हृदय गुफा में निवास करता है। मर्यादा पथों का उल्लंघन करने पर वह स्व—पकड़ में रखने की शक्ति से सम्पन्न है।'' उसे अपराधी को पकड़ने के लिये किसी पुलिस कर्मचारी की आवश्यकता नहीं।

जीवात्मा शरीर के अधीन है, जब वह शरीर को धारण करता है। तभी वह अच्छा या बुरा कर्म कर सकता है।

अर्थात् जीवात्मा बिना शरीर के कुछ नहीं कर सकता और परमात्मा सब कुछ बिना शरीर के ही करता है, उसे किसी भी कार्य के करने के लिये शरीर धारण नहीं करना पड़ता, यही उसकी निराकारिता है।

इन सब प्रमाणों से भी यही सिद्ध होता है कि जीव निराकार नहीं है। मन्त्र में आया है कि वह स्व पकड़ में रखता है, सो स्वपकड़ में आकारवान ही आ सकता है, निराकार नहीं। दूसरे पास के घोंसले में रहता है, निरकार सर्वत्र व्यापक होता है, आकारवान को ही रहने का स्थान चाहिये।

महान सामर्थ्य

निराकार और व्यापक प्रभु का महान सामर्थ्य ही इतने महान संसार को बना देता है। व्यापक रहकर ही बना सकता है, साकार रूप में प्रकट होकर अर्थात् शरीर धारण करके जगत की रचना की ही नहीं जा सकती। कोई भी देहधारी अव्यक्त अर्थात् दिखाई न देने वाली प्रकृति तथा उससे बने परम सूक्ष्म तत्व परमाणुओं को पकड़ नहीं सकता, अत: सृष्टि रचना का कार्य देहधारी के द्वारा सम्भव नहीं। इस कार्य को तो अव्यक्त प्रकृति तथा उससे पूर्व उत्पन्न होने वाले परम—तत्व परमाणुओं में व्यापक रहने वाला ही कर सकता है और परमाणुओं में व्यापक वही रह सकता है जो देह रहित निराकार है।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर ँ शुद्धमपाविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभू: स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वती
भ्य: समाभ्य:।।

यजुर्वेद ४०/८

"स, पर्यगात्" वह परमात्मा आकाश के समान सब जगत् में परिपूर्ण (व्यापक) है। "शुक्रम्" सब जगत् का करने

वाला वही है। "अकायम्" और वह कभी शरीर (अवतार) नहीं धारण करता क्योंकि वह अखण्ड और अनन्त, निर्विकार है, इससे देहधारण कभी नहीं करता, उससे अधिक कोई पदार्थ नहीं है, इससे ईश्वर का शरीर धारण करना कभी नहीं बन सकता। "अव्रणम्" वह अखण्डैकरस अच्छेद्य, अभेद्य, निष्कम्प और अचल है, इससे अंशांशी–भाव भी उसमें नहीं है, क्योंकि उसमें छिद्र किसी प्रकार से नहीं हो सकता। "अस्नाविरम्" नाड़ी आदि का प्रतिबन्ध (निरोध) भी उसका नहीं हो सकता अतिसूक्ष्म होने से ईश्वर का कोई आवरण नहीं हो सकता "शुद्धम्" वह परमात्मा सदैव निर्मल अविद्यादि जन्म, मरण, हर्ष, शोक, क्षुधा, तृषादि दोषोपाधियों से रहित है, शुद्ध की उपासना करने वाला शुद्ध ही होता है और मलिन का उपासक मलिन ही होता है, "अपापविद्धम्" परमात्मा कभी अन्याय नहीं करता क्यों वह सदैव न्यायकारी ही है। "कविः" त्रैकालज्ञ (सर्ववित्) महाविद्वान् जिसकी विद्या का अन्त कोई कभी नहीं ले सकता, "मनीषी" सब जीवों के मन (विज्ञान) का साक्षी सबके मन का दमन करने वाला है, "परिभूः" सब दिशा और सब जगह में परिपूर्ण हो रहा है, सब के ऊपर विराजमान है, "स्वयम्भूः" जिसका आदिकारण माता, पिता, उत्पादक कोई नहीं, किन्तु वही सबका आदि कारण है, "याथातथ्यतोर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः, समाभ्यः" उस ईश्वर ने अपनी प्रजा को यथावत् सत्य, सत्यविद्या जो चार वेद उनका सब मनुष्यों के परमहितार्थ उपदेश किया है उस हमारे दयामय पिता परमेश्वर ने बड़ी कृपा से अविद्यान्धकार का नाशक वेद–विद्यारूप सूर्य प्रकाशित किया है और सब का आदिकारण है ऐसा अवश्य मानना चाहिये ऐसे विद्यापुस्तक का भी आदिकारण ईश्वर को ही निश्चित मानना चाहिये, विद्या का उपदेश ईश्वर ने अपनी कृपा से किया है, क्योंकि हम लोगों के लिये उसने सब पदार्थों का दान दिया है तो

विद्यादान क्यों न करेगा सर्वोत्कृष्ट विद्या पदार्थ का दान परमात्मा ने अवश्य किया है तो वेद के बिना अन्य कोई पुस्तक संसार में ईश्वरोक्त नहीं है, जैसा पूर्ण विद्यावान् और न्यायकारी ईश्वर है वैसा ही वेदपुस्तक भी है अन्य कोई पुस्तक ईश्वरोक्त वेद तुल्य वा अधिक नहीं हैं।

इस मन्त्र के 'स्वयम्भूः' शब्द की ऋषिवर व्याख्या करते हैं, "जिसका आदिकारण माता, पिता, उत्पादक कोई नहीं, किन्तु वह सब का आदि कारण है।" इससे स्पष्ट है कि परमात्मा के अलावा और कोई निराकार नहीं हो सकता, केवल परमात्मा ही निराकार है और शेष सब साकार ही हैं।

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते।१६
न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते।१७
नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते।१८
स सर्वस्मै वि पश्यति यच्च प्राणति यच्च न।१९
तमिदं निगतं सहः स एष एक एक वृद् एक एव।।२०

अथर्ववेद १३/४(२)

अर्थात्—वह यह परमात्मा एक है, एक होकर सब को व्यापने वाला सर्वव्यापक है, वह एक ही है। उसे दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ, छठा, सातवाँ, आठवाँ, नौवाँ वा, दसवाँ नहीं कहा जाता। वह एक है ओर एक ही है। एक होकर वह सर्वव्यापक और प्राणी अप्राणी सबको विशेष रूप से पूर्णतया देखने वाला है।

पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति, विद्यामार्तण्ड
वेदों का यथार्थ स्वरूप चतुर्थ अध्याय

इन वेद मन्त्रों से प्रकट होता है कि ईश्वर एक है। इसका एक और भी अर्थ बनता है, कि केवल एक ईश्वर ही निराकार है, और कोई निराकार हो ही नहीं सकता। अथवा—उसका अवतार नहीं होता, उसका कोई पुत्र नहीं, उसका कोई पैगम्बर नहीं, उसका कोई अवधूत नहीं।

गिनती का आरम्भ १ से होता है और अन्त ९ पर हो जाता है। १ पर एक बिन्दु लगाकर अगली कड़ी बनने लगती है। यजुर्वेद १७/२ में स्पष्ट आता है, एक–एक बिन्दु लगाकर गिनती के क्रम को आगे बढ़ाया जा सकता है।

ईश और जीव एक नहीं

तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति।

मुक्त जीवों का इच्छानुसार समस्त लोकों में गमन होता है। मुक्त जीव स्वरूप में स्थित होता है अर्थात् अपने आप को जानता है कि मैं कौन हूँ, समस्त सांसारिक वस्तुओं को यथार्थ रूप में देखता है, किसी भी सांसारिक वस्तु की कामना नहीं करता, अपने भीतर व्यापक आनन्द स्वरूप परमात्मा का अनुभव करता हुआ परम आनन्द की प्राप्ति करता है। यही मुक्ति में मुक्त जीव की अवस्था होती है। जो यह मानते हैं कि मुक्ति में जीव ब्रह्म में लीन हो जाता है, तो जीव को मुक्ति का आनन्द ही क्या मिला? वास्तव में यह भ्रम है। जीव ईश्वर से भिन्न पदार्थ है। उसके अपने गुण भी हैं। हाँ! ईश्वर और जीव में कुछ गुणों की समानता है, जैसे ईश्वर चेतन है और जीव भी चेतन है, ईश्वर अनादि है और जीव भी अनादि है, ईश्वर अविनाशी है और जीव भी अविनाशी है। कुछ गुणों की समानता होने का यह अर्थ कदापि नहीं कि दोनों एक हैं या एक दूसरे में मिल सकते हैं। जिस प्रकार एक सेर दूध में एक सेर पानी मिला देने से दोनों द्रव्य गुण की समानता होने पर दोनों मिल सकते हैं, परन्तु एक सेर दूध में जितनी क्रीम निकलेगी क्या उससे दुगनी अथवा दुगनी से कुछ कम क्रीम एक सेर दूध और एक सेर पानी मिले दूध से निकल सकती है? कदापि नहीं। इस प्रकार सिद्ध हो सकता है कि समानार्थक पदार्थों का एक दूसरे में

लय होना सम्भव और सार्थक हो सकता है, परन्तु क्या उसके गुणों का ह्रास नहीं होगा? जिस प्रकार दूध का। इसी प्रकार कुछ गुणों की समानता होने पर जीव और ईश का मिलन होकर, ईश के मुख्य गुण आनन्द का ह्रास नहीं होगा? क्योंकि जीव में आनन्द नहीं, ज़िस प्रकार से पानी में क्रीम नहीं।

जहाँ ईश और जीव में कुछ गुणों की समानता है तो जिन गुणों में परस्पर विरोध है उन गुणों पर भी दृष्टिपात कर विचार करना चाहिये जैसे ईश सर्वज्ञ है जीव अल्पज्ञ है, ईश सर्वशक्तिमान है जीव अल्पसामर्थ्य, ईश सर्वव्यापक है जीव एक देशीय, ईश स्वभाव से मुक्त है जीव विद्या—अविद्यादि निमित्त बन्धनों से युक्त फलरूप मुक्ति में जाता है, ईश आनन्द स्वरूप है जीव आनन्द रहित, ईश एक है जीव असंख्य। गुणों का गुणी से सम्वाय सम्बन्ध होता है, अर्थात् गुण गुणी से कभी पृथक नहीं होता, ईश के गुण सदा ईश में रहेगें और जीव के गुण सदा जीव में पाये जायेंगे। न ईश जीव बन सकता है और न जीव ईश बन सकता है, क्योंकि दोनों का अपने—अपने गुणों से सम्वाय सम्बन्ध है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मुक्तजीव के ईश में लय होने का प्रश्न ही नहीं उठता और न मुक्त जीव कभी ईश बन सकता है।

ब्रह्म से इतर जीव सृष्टि कर्त्ता नहीं है क्योंकि इस अल्प, अल्पज्ञ सामर्थ्य वाले जीव में सृष्टिकर्तत्व नहीं घट सकता इससे जीव ब्रह्म नहीं।

''(रसंह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति) यह उपनिषद् का वचन है। जीव और ब्रह्म भिन्न हैं क्योंकि इन दोनों का भेद प्रतिपादन किया है। जो ऐसा न होता तो रस अर्थात् आनन्द

स्वरूप ब्रह्म को प्राप्त होकर जीव आनन्द स्वरूप होता है। यह प्राप्ति विषय ब्रह्म और प्राप्त होने वाले जीव का निरूपण नहीं घट सकता। इसलिये जीव और ब्रह्म एक नहीं।"

सत्यार्थ प्रकाश
एकादश समुल्लास

न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति।।

यजुर्वेद १७/३१

जो परमात्मा इन सब भुवनों का बनाने वाला विश्वकर्मा है, उसको तुम लोग नहीं जानते हो, इसी हेतु से तुम अत्यन्त अविद्या से आवृत मिथ्यावाद नास्तिकत्व बकवाद करते हो, इससे दुःख ही तुमको मिलेगा, सुख नहीं। तुम लोग केवल स्वार्थ साधक प्राण पोषण मात्र में ही प्रवृत्त हो रहे हो, केवल विषय–भोगों के लिये ही अवैदिक कर्म करने में प्रवृत्त हो रहे हो और जिसने ये सब भुवन रचे हैं उस सर्वशक्तिमान् न्यायकारी परब्रह्मं से उलटे चलते हो, अतएव उसको तुम नहीं जानते। प्रश्न—वह ब्रह्म और हम जीवात्मा लोग यह दोनों एक हैं वा नहीं।

उत्तर—ब्रह्म और जीव की एकता वेद और युक्ति से सिद्ध कभी नहीं हो सकती क्योंकि जीव ब्रह्म का पूर्व से ही भेद है। जीव अविद्या आदि दोषयुक्त है ब्रह्म अविद्यादि दोष युक्त नहीं है, इससे यह निश्चित है कि जीव और ब्रह्म एक न थे न होंगे और न हैं, किंच व्याप्यव्यापक, आधाराधेय, सेव्यसेवकादि सम्बन्ध तो जीव के साथ ब्रह्म का है, इससे जीव ब्रह्म की एकता मानना किसी मनुष्य को योग्य नहीं।

आर्य्याभिविनय उ०४४।।

इस मन्त्र के अर्थ से भी यही पुष्ट हो रहा है कि जीव निराकार नहीं साकार ही है।

प्रश्न

'जीव' को यदि निराकार माना जाय तो वह सर्वव्यापक बन जायगा। सर्वव्यापक एक ही है, जीव अनेक हैं।

ज्ञानान्मुक्तिः।। सांख्य दर्शन ३/२३

ज्ञान से ही मुक्ति होती है। दर्शन का यह वचन निरर्थक हो जायगा। फिर तो जीव को मुक्ति की क्या आवश्यकता रही। इसका स्पष्ट मन्तव्य बनता है कि 'जीव' 'निराकार' नहीं। मुक्ति की आवश्यकता साकार को ही होती है।

निवेदन

आर्य सन्यासी, वानाप्रस्थी, उपदेशक आदि विद्वानों से मेरा विनम्रनिवेदन है कि प्रस्तुत विषय 'जीव निराकार या साकार' के बारे में मैंने जो कुछ लिखा है। उसके बारे में कोई दिशा निर्देश आदि हो तो उससे मुझे अवश्य अवगत कराने की कृपा करें।

कीर्त्तन

ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू।
ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू।
ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू।
ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू, ओ३म् भू।

वेदम् शरणम् आगच्छामि
सत्यं शरणम् आग्च्छामि
यज्ञ शरणम् आगच्छामि
इति

वेद संस्थान

की साहित्य सेवा

वेद संस्थान की स्थापना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् २०४८ रविवार १७ मार्च १९९१ को हुई।

वेद संस्थान का लक्ष्य है—सद्साहित्य साधना के अनुसार निःशुल्क, अल्पमूल्य अथवा लागत मूल्य पर आपके पास तक पहुँचता रहे। हमने अब तक १—विनयामृत सिन्धु, २— अभिनन्दनीय व्यक्तित्व, ३— विवेकशील बच्चे, ४— जन्म दिवस, ५— योग परिणति, ६— करवा चौथ, ७— दैनिक पंच महायज्ञ, ८— गोधन, ९— पर्वमाला, १०— दाम्पत्य दिवस, ११— छलकपट और वास्तविकता, १२— ईश महिमा, १३— मन की अपार शक्ति १४— रत्न माला १५— नयन भास्कर १६— युधिष्ठिर यक्ष गीता, १७— यज्ञों का महत्व १८— वेद उद्गीत, १९— दर्पण २०— राष्ट्रीय गौरव २१— संस्कार २२— वातायन नामक पुस्तकें प्रकाशित की हैं। इसी श्रृँखला में श्री वीरेन्द्र गुप्तः द्वारा रचित कृति २३ वीं पुस्तक "जीव निराकार या साकार" प्रस्तुत है। यह प्रस्तुति वेद संस्थान की और सहयोग दानी महानुभावों का है। इस सहयोग और उदार भाव के लिये वेद संस्थान उनका आभारी है।

हमें आशा है कि आप वेद संस्थान को पूर्ण सहयोग देकर नूतन साहित्य प्रकाशित करने का अवसर अवश्य प्रदान करते रहेंगे।

विजय कुमार	वेद संस्थान	अम्बरीष कुमार
प्रकाशन सचिव	मण्डी चौक, मुरादाबाद	सचिव

पूर्ण ग्रन्थ

अपने विषय में यह परिपूर्ण ग्रन्थ है। आप इसके द्वारा सन्तान सम्बन्धी सभी प्रकार के प्रश्नों का समाधान कर सकते हैं सन्तान का न चाहना (निरोध) सन्तान का रंग, रूप, आकृति, स्वभाव, योग्यता और पुत्र, कन्या कैसी और किसकी इच्छा है। यह सब कुछ आपके हाथ में है।

ग्रन्थ का नाम - **इच्छानुसार सन्तान,**

लेखक - वीरेन्द्र गुप्त:

विशेष-यदि, आपके सन्तान नहीं है या बार-बार गर्भ गिर जाता है या सन्तान जन्म लेकर समाप्त हो जाती है। इन सबके समाधान हेतु आप परामर्श ले सकते हैं।

सूर्य गुणी

पुत्रदाता औषधि

इस प्रभावयुक्त दिव्यौषधि का गर्भावस्था के ८१ से ८५ दिन के मध्य में सेवन कराने से पुत्र ही प्राप्त होता है।

वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार

प्रकाशन मन्दिर, मण्डी चौक, मुरादाबाद–२४४००१

एवं

इन्दिरा गुप्ता : वेद कुटि ९३

रामबिहार कालोनी, जिला सहकारी बैंक के पीछे

मुरादाबाद – २४४००१

वेद दर्शन

हिन्दी टीका सहित अनुपम ग्रन्थ। मूल्य १००/–

इच्छानुसार सन्तान

मनचाही पुत्र–पुत्री, धर्मात्मा, जितेन्द्रिय सन्तान प्राप्त करना। मूल्य १३०/–

पुत्र प्राप्ति का साधन

पुत्र प्राप्ति के लिये मार्ग दर्शन मूल्य १०/–

गर्भावस्था की उपासना

गर्भित बालक के संस्कार बनाना। मूल्य १/–

दस नियम

आर्य समाज के नियमों की सरल भाषा में विस्तार से व्याख्या। मूल्य ७/–

दैनिक पंच महायज्ञ

नित्य कर्म विधि। मूल्य १०/–

HOW TO BEGET A SON मूल्य २५/–

गायत्री साधन मूल्य ५/–